(11) श्रमण जन० 1970

पंडित मुनि विनयचन्द्र-रचित ग्रह-दीपिका

श्री अगरचन्द नाहटा

जैन मुनियों ने बहुत बड़ी साहित्य-सेवा की है। प्रायः प्रत्येक भाषा और विषय के ग्रन्थ उन्होंने बनाये हैं। जैनेतर विद्वानों के अनेकों ग्रन्थों पर टीकाएं लिखकर उन्हें सुबोध बनाया और अध्ययन एवं प्रचार में उल्लेखनीय योग दिया। जैन मुनियों का जीवन बहुत संयमित होने के कारण उनके आहार, वस्त्र आदि की पूर्ति प्रायः श्रावक समाज द्वारा हो जाती है। वे पैदल विहार करके निश्चितता से अनेक ग्राम-नगरों में विचरते हुए धर्म प्रचार करते रहते हैं। अपने आवश्यक क्रिया-कलापों के अतिरिक्त उन्हें जो भी समय मिलता उसे स्वाध्याय, ग्रन्थ-लेखन, ग्रन्थों की प्रतिलिपि करने और नवीन साहित्य-निर्माण में लगाते रहते हैं। जैन-जैनेतर का भेद-भाव रखे बिना कोई भी रचना उन्हें उपयोगी और महत्व की मालूम पड़ती तो उसकी नकल करके अपने पास रख लेते और श्रावकों को भी उपदेश देकर हजारों प्रतियों को सहियों से लिखवाकर जैन ज्ञान-भंडारों में सुरक्षित कर देते। उसीका परिणाम है कि मुस्लिम काल में हजारों प्रतियां नष्ट होने पर भी जैन ज्ञान-भंडारों में आज भी लाखों प्रतियां प्राप्त हैं। देश-विदेश के अनेकों हस्तलिखित ग्रन्थ-भण्डारों में जैनों की लिखी और लिखवाई हुई हजारों प्रतियां उपलब्ध हैं। खेद है कि उन सबकी पूरी सूची भी अभी तक प्रकाशित नहीं हो सकी है।

कतिपय हस्तलिखित भण्डारों की सूची तो अभी तक बनी ही नहीं है। कइयों की पुराने ढंग से बनी हुई है जिसमें केवल ग्रन्थ का नाम और पत्र-संख्या ही दी हुई है। ग्रन्थकार का नाम एवं रचना, लेखक का समय, स्थान आदि विवरण नहीं दिया गया है। एक ही नाम वाले ग्रन्थ कई व्यक्तियों के रचित मिलते हैं। इसलिये जब तक सूची में रचयिता का नाम

नहीं दिया जाता तब तक वे ग्रन्थ किसने, कब बनाये और एक ही नाम वाले ग्रन्थ के कर्त्ता एक ही हैं या भिन्न-भिन्न हैं, यह निश्चय नहीं किया जा सकता। कई हस्तलिखित ग्रन्थ-संग्रहालयों में हजारों फुटकर पत्र और गुटके सुरक्षित हैं पर उनको साधारण मानकर उपेक्षा करते हुए उनकी सूची नहीं बनाई जा सकती। बहुत-सी प्रतियों को त्रुटित, अपूर्ण और खराब स्थिति में होने के कारण उन्हें सूची में दर्ज नहीं किया जाता। इसलिये अभी सैकड़ों विद्वानों की हजारों रचनाएँ अज्ञात रूप में पड़ी हुई हैं।

करीब ४० वर्ष पूर्व हमें हस्तलिखित प्रतियों के अवलोकन एवं संग्रह की रुचि जाग्रत हुई। फलतः अबतक हमने विविध स्थानों के लक्षाधिक प्रतियों के नोट्स ले रखे हैं और अपने अभय जैन ग्रन्थालय में ३५ हजार से अधिक हस्तलिखित प्रतियों का संग्रह कर ही चुके हैं। इस संग्रह में हजारों रचनाएँ ऐसी भी हैं जो अन्यत्र कहीं नहीं मिलतीं और सैकड़ों ऐसे ग्रन्थों की प्रतियाँ अपूर्ण ही व त्रुटित हमें उपलब्ध हुई। बहुत-सी अनुपलब्ध रचनाओं में से किसी का प्रथम पत्र, किसी के मध्य पत्र और किसी के अन्त के पत्र ही हमें उपलब्ध हुए हैं। जिनकी खोज करने पर भी इनकी अन्य कहीं भी पूरी प्रति नहीं मिल सकी। समय-समय पर ऐसी अज्ञात रचनाओं की जानकारी अपने लेखों में प्रकाशित करता रहा हूँ। प्रस्तुत लेख में भी ऐसे ही एक ज्योतिष जैन ग्रन्थ का परिचय दिया जा रहा है जिसकी प्रति का केवल दूसरा (संख्यांक-२) पत्र ही प्राप्त हुआ है। इस ग्रन्थ का नाम है—ग्रह दीपक या दीपिका। इसके रचयिता हैं खरतरगच्छ की क्षेमशाखा के वाचनाचार्य ज्ञानमूर्ति के शिष्य पंडित विनयचन्द्रजी। सम्भवतः ये १८ वीं शताब्दी में हुए हैं।

ग्रह दीपक के प्राप्त द्वितीय पत्र में ग्रन्थ का तृतीय, चतुर्थ और पंचम अधिकार लिखा हुआ है। जिसमें तृतीय का तो थोड़ा अन्तिम अंश है और पाँचवें के बाद छठे की भी चार पंक्तियाँ लिखी हुई हैं। चतुर्थ अधिकार के बाद 'अथ दृष्टि साधनम्' और 'विशेष दृष्टि साधनम्' के दो कोष्टक लिखे हुए हैं। सम्पूर्ण ग्रन्थ में कुल कितने अधिकार थे और ग्रन्थ कितना बड़ा है, कब एवं कहाँ रचा गया—ये सब बातें तो ग्रन्थ पूरा मिलने पर ही मालूम होंगी। प्राप्त तीन अधिकारों की पुष्पिकाएँ नीचे दी जा रही हैं :—

१. 'इति विनयचंद्र विरचिते पंचांगानयनं तृतीयधिकारः ॥
२. इति विनयचन्द्र विरचिते बलाधिकारः चतुर्थः ॥
३. इति श्री खरतर गछे षेम शाखायां वाचनाचार्य श्री ज्ञानमूर्ति तत्शिष्य पंडित विनयचंद्र विरचिते ग्रह दीपकायां आयुर्दायाधिकारः पंचम ।'

'अथ लघुवाण साधनं' लिखते हुए छठा अधिकार प्रारम्भ किया गया है।

जैन ग्रन्थावली पृ० ३५१ के अनुसार जैसलमेर में जब मुनि हंस-विजयजी पधारे थे और उन्होंने वहां के ज्योतिष ग्रन्थों की सूची बनाई तो उसमें ज्ञानदीपिका की ८ पत्रों की प्रति का उल्लेख है। सम्भव है वह यही ग्रन्थ हो। पर उनकी सूची में रचयिता का नाम नहीं दिया हुआ है। इसलिए निश्चयपूर्वक नहीं कह सकते। मुनि पुण्यविजयजी ने जैसलमेर भंडार की सूची बनाई है, उसमें तो यह ग्रन्थ नहीं है। इसलिये सम्भव है जैसलमेर की वह ८ पत्रों वाली प्रति भूल से इधर-उधर हो गई हो। उसका केवल द्वितीय पत्र ही अपूर्ण प्रतियों के साथ कहीं से हमारे संग्रह में आ गया हो। हंसविजयजी की सूची में ज्ञानप्रदीप पत्र १३ का उल्लेख है। इस नाम वाले ग्रन्थ के पत्रांक ७ व ८ हमारे संग्रह में हैं।